श्री मन्मोहन यशःस्मारक ग्रंथमाला ग्रथांक-२२

મહોપાધ્યાય શ્રીમજ્જયસોમજી ગણિવર રચિત

प्रश्नोत्तर चत्वारिंशत् शतक

યાને આ. જબૂસૂરિ સંપાદિત

(તપા ખરતર ભેદ પ્રત્યુત્તર)

સંપાદક —

પરમસુવિહિત ખરતરગચ્છવિભૂષણ શ્રીમોહનલાલજી મ. ના
પ્રશિષ્યરત્ન સ્વ૦ અનુયોગાચાર્ય શ્રીકેશરમુનિજી ગણિવર શિષ્ય
બુદ્ધિસાગર ગણિ

પ્રકાશક :—

ચાણુતીર્થોદ્ધારાદિ અનેકવિધ શાસનપ્રભાવકાચાર્ય શ્રીજિનર્દ્ધિ સૂરિજી
મ૦ ના વિનીત શિષ્યરત્ન શ્રીગુલાબમુનિજી મ. ના ઉપદેશ દ્વારા
સમસ્ત અનેક સદ્‌ગૃહસ્થોની દ્રવ્યસહાયથી
મુંબઈ-પાયધુની મહાવીર સ્વામી જૈન મંદિર ટ્રસ્ટ ફંડના

મેનેજીંગ ટ્રસ્ટી

શેઠ ઝવેરભાઈ કેસરીભાઈ ઝવેરી

વીર સંવત્	કિંમત	વિક્રમ સંવત્
૨૪૯૨	૫-૦-૦	૨૦૨૨

દ્રવ્યસહાયકોના શુભ નામ

રૂ. ૧૦૦૧) શેઠ રાઘવજી માધવજી અને બીજાઓ. કચ્છભુજ
હ. હર્ષદરાય એન્ડ બ્રધર્સ મુંબઇ.
,, ૨૦૧) ,, કેશવલાલ દલપતભાઈ ઝવેરી, ખંભાત
હ. શ્રીસુંદરલાલભાઇ ઝવેરી.
,, ૧૫૧) ,, પૂનમચંદજી ગુલાબચંદજી, ફલોદી (મારવાડ)
,, ૧૫૧) ,, માનમલજી ઉત્તમચંદજી, હાપુડ (યૂ.પી.)
,, ૧૦૧) લાલા કપુરચંદજી શ્રીમાલ, દખણ હૈદરાબાદ
,, ૧૦૧) શેઠ અશ્વિનકુમાર અચરતલાલ શાહ, રાધનપુર (ગુ.)
,, ૧૦૧) ,, મણિલાલ ચતરભુજ ગાંધી, ભાવનગર (હા.મુલુંડ)
,, ૫૧) ,, હીરાભાઇ રાયચંદ ભણસાલી, પાલણપુર (ગુ.)
,, ૫૧) ,, વેણીલાલભાઇ હુકમચંદ, ખંભાત
હ. સુંદરલાલભાઇ ઝવેરી.
,, ૫૧) ,, દામોદર ખાખરા, પોરબંદર
હ. અમૃતબેન, મુલુંડ
,, ૫૧) ,, હંસાબેન તે રતનસી નરસી–કચ્છ લાયજા
,, ૨૫) ,, હંસરાજજી જસરાજજી મહેતા, સાંડેરાવ (મારવાડ
,, ૨૫) ,, લૂણીયા બ્રધર્સ, હ. ભભુતમલજી લૂણીયા,
ચાંચોડી (મારવાડ)
,, ૨૫) ,, રૂપરાજજી માંગીલાલજી મતા, નાડોલ (મારવાડ)
,, ૧૫) ,, મોરારજી લાલજી, કચ્છ મુંદ્રા.
,, ૧૧) ,, સાગરમલજી અચલાજી, ખીમેલ (મારવાડ)

प्रस्तावना

वि स २००७ मे श्रीविजयप्रेमसूरिके शिष्य श्रीजंबूसूरिने सत्तरहवीं सदीके दो बोलसग्रहोंका मूल और उसका गुजराती अनुवाद प्रकाशित करवाया, प्रथम बोलसग्रहमें १०१ व दूसरेमें १६१ बोल है, दोनोंमें प्राय वेही बातें है दोनों बोलसग्रहोंकी भाषा अशिष्ट और द्वेषमूलक है।

अपने आचारका-समाचारीका समर्थन करना एक बात है परतु येनकेन प्रकारेण उसका औचित्य सिद्ध करना व दूसरोंके सिद्धान्तोंका खडन करना भी किसी हद तक क्षम्य हो सकता है किंतु दूसरोंके लिये यह लिखना कि 'खरतर जुठा छ, शास्त्रहित छे, निन्हव माहि छे, सूत्र उलंघे छे, यह जगलीपन नहीं तो और क्या है? दोनो ही बोलसग्रहके लेखकोंने अपना नाम नहीं दिया है, लेखक लिखता है कि-" अत तो एना बोल काई दीठा, कोई साभल्या पणि लख्या छे कोई बोल अधिका ओछा पणि लिख्या होय ते प श्री मेरुविजय गणि आगे वांचियो " इस लेखसे स्पष्ट है कि लेखक कोई अधिकारी विद्वान नहीं था ऐसे अनधिकारी गुमनाम लेखककी पुस्तक प्रकाशित करके तथा अपनी द्वेषपूर्ण टिप्पणिया लिखकर जबूसूरिने अपनी आत्मप्रसन्नताका खोखलापन ही सिद्ध किया है।

प्रस्तावनामें लेखकने भी अपनी जिम्मेदारी नही समझी और असभ्य शब्दोंका प्रयोग करके इस पुस्तकको पूर्णतया द्वेषमय बना दिया है।

जैन इतिहासका एक सामान्य अभ्यासी भी यह भलीभाति जानता है कि अन्य लोगोंको जैन बनाकर जैन धर्मकी जितनी सेवा खरतर गच्छीय आचार्योंनेकी है उतनी किसी भी गच्छके आचार्योंने नहीं की, इसही लिये स्थान २ पर लोगोंने उन महापुरुषोंके चरणों की प्रतिष्ठा कराके 'दादावाडीयें' बनवाई हैं, तीर्थाधिराज शत्रुजय पर 'खिमतरवसहि'मे भी उनकी चरण उनका यशोगान कर रहे हैं।

महान इतिहास वेत्ता श्री जिनविजयजी लिखते हैं × कि "श्वेताम्बर जैन संघ जिस स्वरूपमें आज विद्यमान है, उस स्वरूपके निर्माणमें खरतर गच्छके आचार्य, यति और श्रावक-समूह का बहुत बड़ा हिस्सा है। एक तपागच्छको छोड़कर दूसरा और कोई गच्छ इसके गौरवकी बराबरी नहीं कर सकता। कई बातोंमें तपागच्छ से भी इस गच्छका प्रभाव विशेष गौरवान्वित है। भारतके प्राचीन गौरवको अक्षुण्ण रखनेवाली राजपुतानेकी वीर भूमिका पिछले एक हजार वर्षका इतिहास ओसवाल जातिके शौर्य, औदार्य, बुद्धि-चातुर्य और वाणिज्य-व्यवसाय-कौशल आदि महद् गुणोंसे प्रदीप्त है और उन गुणोंका जो विकास इस जातिमें इस प्रकार हुआ है, वह मुख्यतया खरतरगच्छके प्रभावान्वित मूल पुरुषोंके सदुपदेश तथा शुभाशिर्वादका फल है। इसलिये खरतरगच्छका उज्ज्वल इतिहास यह केवल जैनसंघके इतिहासका ही एक महत्त्वपूर्ण प्रकरण नहीं है, बलिक समग्र राजपुताने के इतिहासका एक विशिष्ट प्रकरण है।"

ऐसे महाप्रभाविक आचार्योंको झूठा और निन्हव, कहना बुद्धिका दीवालियापन व जंगलीपन नहीं तो और क्या है ?

तपागच्छनायक श्रीविजयदानसूरिजीने धर्मसागर उपाध्यायको इसही लिए गच्छ बाहर किया था कि उसने अन्य गच्छीयोंको निन्हव कहा था, श्रीहीरविजयसूरिजीने जो बारह बोल निकाले थे + उसमें आठवां बोल यह है कि 'शास्त्रों में सात ही निन्हव कहे हैं उनके अतिरिक्त जो अन्य गच्छीयों को निन्हव कहे उसमें समकित नहीं रहता।'

इससे सिद्ध है इन बोलसंग्रहोंके लेखक अनुवादक व प्रस्तावक यह तीनो ही समकित रहित व गुरुद्रोही हैं। लोकमत प्रायः चंचल होता है, लोग प्रवाहमें आ जाते हैं इसलिए इन बोलोंका उत्तर छपना आवश्यक समझा गया, इन बोलोंकी सारी सत्य हकीकत शुद्ध

× खरतर गच्छ पट्टावली संग्रह पृ० ग

\+ जैन ऐतिहासिक रास संग्रह भाग ४ पृ० १४

हृदय सरल चित्त श्रीजयसोम उपाध्यायजी ने अपने ग्रन्थकी आदि में ही दे दी है। उत्तर देनेका आशयभी कितना शुद्ध है, पाठक! उनका भी नमूना देखिए 'हमारी मति विपक्षियोंकी समाचारी दूषित करनेकी नहीं है किन्तु उनके लगाये हुए दूषणोंको विच्छेद करने की है' अर्थात् आक्रमण करनेका भाव नहा है, अपनी रक्षाका प्रयत्न मात्र है, यही वीरता और शांतिप्रियता है, प्रत्येक उत्तरमें उनकी अगाध विद्वत्ता टपकती है। तपोमूर्ति श्रीबुद्धिमुनिजीने भी लेख के पदचिन्होंका अनुसरण करके अनुवादका कर्त्तव्य पालन किया है।

इस समय श्वेताम्बर मूर्ति पूजक सघमे मुख्यतया दो ही गच्छोंके अनुयायी है, इन दोनोंकी कृपमे सघकी हानि व सहिष्णुतामें जैन श्वेताम्बर मूर्ति पूजक सघकी उन्नति निहित है, समाजको चाहिये कि ऐसे कदाग्रही गच्छवादी साधुओंके प्रभावमें आकर अपने द्रव्य व शक्तिका दुरुपयोग न करें, ऐसे लोगोंका जमाना लद चुका है तो भी जैन प्रजा इनके प्रपचमें फँसहीजाती है।

धर्म वीतरागतामे है, रागद्वेषके त्यागमें है, जो मनुष्य हमें रागद्वेषसे विमुख करे वही पूज्य है, जो रागद्वेषकी ओर अग्रसर करे वह आदरणीय नहीं हो सकता, कसोटी पर कस कर जैन प्रजा को आचार्य उपाध्याय साधु व पुस्तकोंकी परिक्षा करनी चाहिये। गच्छ रागमे धर्म नहा है गच्छ सहिष्णुतामे ही धर्म हैं।

आजकलका मानस विविधतामें एकता, भेद भावमें समन्वय खोजता है, जैन कवियोंमें आनन्दघनजी महाराजकी कविता पर लोग इस ही लिए मुग्ध है कि वे अनेकतामें एकताकी झांकी करते ह। उस महापुरुषने क्या ही उदात्त भाव प्रदर्शित किये हैं।

षट दर्शन जिन अंग भणीजे, न्यास षडग जे साधे रे।
नमि जिनवरना चरण उपासक, षड दर्शन आराधे रे॥

अर्थात् भगवान नमिनाथका चरण उपासक एक जैन व्यक्ति केवल जैन दर्शन ही क्या? सांख्य वेदान्त बौद्ध आदि छओं दर्शनों

सबसे पुरानी व सबसे श्रेष्ठ हैं, अन्य सब स्नात्र पूजायें उसकी नकल मात्र हैं, जो फरक हीरे व काचमें होता है वही उनमें है।

एक बात और ध्यान देने योग्य है— यद्यपि खरतरगच्छीयोंकी भी अनेक शाखाये हैं पर समाचारी सबकी एकसी है, इससे सिद्ध होता है कि इनका कुछ मूल आधार है, किन्तु तपागच्छके आचार्यो की समाचारी भिन्न२ है इस लिए "अपनी२ डफली और अपनी२ राग" वाली कहावत यहां पूर्णतया चरितार्थ होती है।

(५)प्रथम बोल संग्रह बोल १३६ में कहा है कि 'अभयदेव सूरि के गुरु श्रीजिनेश्वरसूरिको जो श्रीदुर्लभराज ने 'खरतर' विरुद दीया होता तो अभयदेवसूरि नवाग टीकामें इसका वर्णन अवश्य करते, उन्हें जानना चाहिए कोई भी शिष्ट पुरुष अपने मुखसे अपनी (व अपने गुरु आदिकी भी) प्रशंसा नहीं करता। दूसरे अभयदेवसूरिने अपनी आगमो की टीकाका लेखन संशोधन चैत्यवासी आचार्य श्रीद्रणाचार्यसे कराया था, यदि वे उसमें खरतर विरुदका उल्लेख करते तो आगमोकी टीकाके लेखन व प्रचारमें चैत्यवासी आचार्योंका जो सहयोग प्राप्त हुआ था वह न होता।

वे अपना उत्तराधिकारी किसी अत्यन्त शक्तिशाली विद्वान शिष्य को बनाना चाहते थे, उनके औपसंपदिक शिष्य जिनवल्लभ गणिमें ये सब गुण थे, किन्तु वे प्रथम चैत्यवासी आचार्यके शिष्य थे, इनसे तो उन्हों ने सिद्धान्त वांचना व उपसंपदा पाई थी। उस समय चैत्यवासीयोका बहुत जोर था, सुविहित मुनिओ नाम मात्रके रहे थे अधिकांश मठाधिपती बने हुए थे। इससे कहीं चैत्यवासियोंको अपने प्रचारका मोका न मिल जाए! श्रीअभयदेव सूरिजीने अपने अत्यन्त विश्वस्त शिष्य प्रसन्नचन्द्रसूरिसे कहा कि- जब लोगो पर जिन वल्लभ गणिका प्रभाव प्रगट हो जावे, जन समुदाय इसके महत्वको जान ले, तो इस को गच्छ नायक बनाना अभी तो वर्धमान सूरिजी को ही मेरा उत्तराधिकारी जानना।

प्रसन्नचन्द्रसूरिने यह भार अपने सुयोग्य शिष्य देवभद्राचार्य पर छोड़ा और स्वर्ग सिधारे। उस समय देवभद्राचार्य इस समुदाय में बहुत प्रभावशाली आचार्य थे उन्होंने वीर चरित्र पार्श्वनाथ चरित्र आदि कई ग्रन्थ बनाये थे।

इधर जिनवल्लभ गणिने पिंडविशुद्धि सघपट्टक आदि अनेक ग्रन्थ बनाये। वागड देशमें दस हजार नूतन जैन बनाये, उनकी महानता सब पर प्रगट हो गई, समुदाय उनका पूर्ण भक्त हो गया तब देवभद्राचार्यनें ११६७ में गच्छका नेतृत्व उनके हाथ सौंप कर दादा गुरु श्रीअभयदेवसूरिके आदेशका पालन किया। जिनवल्लभसूरिके स्वर्गारोहण पश्चात इन्हीं देवभद्राचार्यने जिनदत्तसूरिको गच्छनायक बनाया।

११६७ से १२११ तक युगप्रधान जिनदत्तसूरिजीका शासन काल था। 'खरतर' विरुदसे चैत्यवासियोंकी पराजयका संकेत मिलता है। दूसरेका दिल दुखाना उचित न जानकर इन महापुरुषों ने स्वयं इसका प्रयोग नहीं किया किन्तु जब भक्तिवश अन्य लोग विरुदका प्रयोग करने लगे तो फिर इस विरुदका प्रयोग होने लगा।

श्रीअभयदेवसूरिजीको खरतरगच्छसे पृथक रखनेका विचार सबसे पहले तपागच्छी धर्मसागर उपाध्यायके दिमागमें आया। श्रीअभय देवसूरिने नवअंग सूत्रोंपर टीकाकी थी, इसलिये इनका खरतरगच्छमें होना धर्मसागरको बहुत अखरता था। खोजनेपर उसको इसका कूट उपाय भी मिल गया, क्योंकि खरतरगच्छ पट्टावली—गणधर सार्द्धशतकवृत्तिमे जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है अभयदेवसूरिने वर्धमानसूरिको अपना उत्तराधिकारी नियत किया था। इस ग्रंथकी इस बातको तो ये लोग मान लेते हैं किन्तु प्रसन्नचद्रसूरिको जो आदेश दिया गया था उसे नहीं मानते † इसे ही द्वेष बुद्धि कहते हैं। क्या एक आचार्य के २ पट्टधर नहीं हो सकते ? क्या जगचन्द्रसूरिजीके दो पट्टधर

† तपा खरतर भेद पृ० १७३।

नहीं हुए? श्रीअभयदेवसूरिके शिष्य गुरुबंधु श्रीजिनचन्द्रसूरिने अपनी बनाई संवेगरंगशालाका संशोधन श्रीअभयदेवसूरि शि० जिनवल्लभ गणिसे कराया था, इसका स्पष्ट उल्लेख उन्होंने किया है। चित्रकूट प्रशस्ति में जिनवल्लभ गणि ने (१) प्रसन्नचंद्रसूरि (२) वर्धमानसूरि (३) हरिभद्रसूरि और (४) देवभद्रसूरिकी स्तुतिकी है।

इससे स्पष्ट है अपने गुरुबंधु वर्धमानसूरिके प्रति भी उनका काफी आदर था और श्रीजिनचंद्रसूरिजीने उन्हें अभयदेवसूरिजीका शिष्य कहा है।

इन सब बातोंसे यह भी स्पष्ट है जिनवल्लभसूरि इसी परंपरा मे थे, उनके सब ग्रन्थोंमें उन्होंने श्रीअभयदेवसूरीको अपना गुरु माना है।

श्रीअभयदेवसूरिके पाट पर तो २ आचार्य थे इसलिए छिद्रान्वेषीयोंको कुछ कहनेका अवसर मिल गया किन्तु जिनवल्लभसूरिके पाट पर तो एकमात्र युगप्रधान जिनदत्तसूरिजी थे, ऐसी अवस्थामें जिनवल्लभ(सूरि)गणिको इस परंपरामें न मानना सिवा इतिहासके अज्ञानके क्या हो सकता है। ×

श्रीजगचन्द्रसूरिको उदयपुर दरबारने 'तपा' विरुद दीया इसका उल्लेख केवल तपागच्छीय पट्टावलियोंमें है, फिर भी हम तो इनपे आक्षेप नहीं करते, फिर श्रीजिनेश्वरसूरिको गुर्जरनरेश श्रीदुर्लराजने 'खरतर' विरुद दीया इससे चिढ क्यो है ? वीर वंशावली आदि अनेक स्थलो पर तपागच्छीय. लोगोंने भी इस चीजको माना है पर द्वेषबुद्धि मनुष्य को अंधा बना देती है। इसीसे उन्हें सत्यके दर्शन नहीं होते।

सूर्यसप्तमी सं० २०१२] [**उमरांवचन्द जरगड**

× तपा खरतर भेद पृ० २ ।

ગ્રંથકારે, ને ટિપ્પણકારે આપેલ પ્રમાણ ગ્રંથોનું અકારાદિ અનુક્રમ

ગ્રંથકારે, ને ટિપ્પણકારે આપેલ પ્રમાણ ગ્રંથોનુ અકારાદિ અનુક્રમ

॥ ॐ अर्हं नमः ॥



नमोऽत्थुण अविसंवाइणो समणस्स भगवओ महावीरस्स ।

नमोनम परमगुरु श्रीमदभयदेव-जिनदत्त-कुशल-

मोहन-यशो-ऋद्धि-केशर पादपद्मेभ्य ।

श्रीमन्मोहन-यशः स्मारक ग्रन्थालायां

वादिकन्दकुद्दाल-सकलसूरिशेखर-युगप्रधानाचार्यप्रवर-श्रीमज्जिनचन्द्र-

सूरि साम्राज्यवर्त्ती वाचनाचार्य श्रीमत्प्रमोदमाणिक्यगणिपुंगव-

विनेयावतंस श्रीमदकब्बरसुलतानसंसल्लब्धजय महोपाध्याय

श्रीमज्जयसोम गणिवर विनिर्मित रामयशु जयूसपादित

'तपाखरतरभेद' प्रत्युत्तररूप—

प्रश्नोत्तर चत्वारिंशत् शतक

श्रीगामेयममेय-प्रमेयपरिकलनकलितमतिविभव ।

करणत्रययुतवन्दन-करणेनानम्य रम्यतम ॥ १ ॥

श्रीमज्जिनदत्तगुरु-श्रीजिनकुशलसूरिगुरुराजौ ।

विघ्नव्यूहविघात, कुरुतां मत्प्रीतिमाधाय ॥ २ ॥ *

---

* ઉપા० શ્રીસુખસાગરજીની પ્રતિમા ૨-૩ ને ૪ થો શ્લોક નથી

गुरवोऽपि दयातिलकाः, प्रमोदमाणिक्यवाचनागुरवः ।
विदधतु बोधविकाशं, विख्याताः क्षेमशाखायां ॥ ३ ॥
श्रुतदेवते ! प्रसादं, विधाय मयि बोधवृद्धिमाधाय ।
अस्खलितयुक्तिविभवं, वितनु तनुकृत्य परपक्षं ॥ ४ ॥
विदधति प्रश्नपदाना–मुत्तरवाक्यानि समयमयमत्या ।
युगवरजिनचन्द्राणां, वाक्याज्जयसोमनामानः ॥ ५ ॥
अस्माकमसाम्भोगिक–सामाचारिषु दूषणे न मतिः ।
तद्दत्तदूषणानां, विच्छेदाय प्रवृत्तिरियं ॥ ६ ॥
वार्ताविहितवाक्यानां, समाधानाय केवलं ।
वार्ताभिरेव तत्तेषा–मुत्तरं दातुमुद्यमः ॥ ७ ॥

ભાષાઃ–અપરિમિત પદાર્થોના જ્ઞાનયુક્ત મતિવિભવવાળા શ્રીપાર્શ્વ-પ્રભુને મન વચન અને કાયાથી વંદન કરવા પૂર્વક સારી રીતે નમસ્કાર કરીને (પ્રશ્નપદોના ઉત્તર લખીએ છીએ) ॥૧॥ શ્રીમજ્જિનદત્તસૂરિ અને શ્રીજિનકુશલસૂરિ આ બન્ને ગુરૂદેવો ઉત્તમ પ્રસન્નતા કરીને વિઘ્ન-સમૂહનો નાશ કરનારા થાઓ ॥૨॥ ક્ષેમધાડ શાખામાં વિખ્યાત એવા ગુરૂમહારાજ દયાતિલક (ગણિ) તથા પ્રમોદમાણિક્ય વાચના ગુરૂ. આ બન્ને ગુરૂઓ પણ બોધનો વિકાસ કરનારા થાઓ ॥ ૩ ॥ હે શ્રુતદેવતે ! (તમો) પ્રસન્નતા પૂર્વક મ્હારામાં બોધ (સમ્યગ્જ્ઞાન) ની વૃદ્ધિ કરી પરપક્ષને અલ્પ કરીને અસ્ખલિત યુક્તિવિભવને વિસ્તારો ॥૪॥ (આવી રીતે નમસ્કારાદિ કરીને) યુગપ્રધાન આચાર્ય શ્રીજિનચન્દ્ર સૂરિજીના આદેશથી જયસોમ નામના પાઠક સમયાનુસારિણી મતિએ પ્રશ્નપદોના ઉત્તર વાક્યો રચે છે ॥ ૫ ॥ અમારી મતિ વિપક્ષિયોની

સામાચારીને દૂષિત કરવાની નહી, પણ તેણે આપેલ દૂષણોનો વિચ્છેદ કરવાને આ પ્રવૃત્તિ છે ॥ ૬ ॥ ભાષામાં લખેલ વાક્યોના સમાધાન માટે ભાષાથી તેઓનો ઉત્તર દેવાનો ઉદ્યમ છે ॥ ૭ ॥

श्रीअहम्मदावादमाहे श्रीजेमलमेरु वास्तव्य वहरा गोत्रीय साह सुजइ संवत् १६२६ वर्षे ज्येष्ठसुदि ५ दिने अम्हारा गुरु वाचनाचार्य श्रीप्रमोदमाणिक्य गणिने श्रीमुखि अम्हज समीपि चर्चा करी १६ श्रावका साथ समक्ष श्रीजिनप्रतिमा महामहो-च्छवपूर्वक जुहारी । पछइ वली ४८ बोल श्रीखरतरगच्छ सामा चारीना सर्व गच्छना गीतार्थ यतियानइ सिद्धांतनइ न्यायें पूछी तथा चर्चा करी ऋषि मेघजी प्रमुख २८ लुंका यतिया साथि श्रीखरतरगच्छनी सामाचारी सर्व शास्त्रसमत जाणी आदरता थका लुंका ऋषि मेघजीनइ पोयानइ सामलइ [झगडै] लुंका श्रावका ३४ साथि पोताना झगडा करिवानइ निमित्ति तपेड झगडाना बोल कबूल कीयइ थकइ श्रीखरतर रुघनाथक मत्यवादी श्रीमारगधर मुहुर्तइ निषेधता लुंका ऋषि मेघजी २८ ठाणइ तपामाहि गया । पछइ १६ श्रावका साथि श्रीखरतरगच्छनी सामाचारी वहरइ सूजइ आदरी । हिवे तेह वहरा सा० सूजाना पुत्र सा० राजसी, तिणइ पुणि चरचा करी श्रीजिनप्रतिमा जुहारीनइ श्रीखरतरगच्छनी सामाचारी भावइ आदरी खरतर थया, पछी मुलतान माहि किणएकइ मेलि खरतर श्रावका साथि मन अणमिलता तपा श्रावकानइ आदरइ अणपच्चर्या नुणमइ (?) तपानी सामाचारी मुलतानमाहि त मइयइ

आदरी । पछी एतला वोल लिखी करी श्रीलाहोरि तपानां श्रावकां-नइ खरतरां भणी पूछिवानइ काजि मूंक्या, लाहोरमध्ये ते वोल किणही चर्च्या नहीं, पूछ्या नहीं, इमजि लिख्या रह्या । पछी ते वोल आपणइ हाथि आव्या, परं ते वोल लिखितां द्वेपनइ वाह्यइ घणा असंवद्ध वोल लिख्या छइ, ते वोल न लिखायइ । हिवइ श्रीजिनचन्द्रसूरि युगप्रधानजीनइ आदेशइ आचार्य श्रीजिनसिंहसूरिजीनइं कथनि आपणइ काजि ऊतरसेती ते प्रश्नरा वोल लिखीयइ छीइं ।

ભાષા—શ્રીજેસલમેર નિવાસી શા. સૂજા વહોરાએ શ્રીઅમદાવાદમાં સંવત્ ૧૬૨૯ વર્ષે જેઠ સુદ ૫ ના રોજ અમારા ગુરૂ વાચનાચાર્ય શ્રીપ્રમોદમાણિક્ય ગણિના સમક્ષ અમારી પાસે ચર્ચા કરીને ૧૬ શ્રાવકો સાથે સમજીને મહામહોત્સવે શ્રીજિનપ્રતિમા જુહારી (વાંદી), ત્યાર બાદ ૪૮ બોલ ખરતરસામાચારીના સર્વ ગચ્છના ગીતાર્થ યતિયોને સિદ્ધાંત ન્યાયે પૂછી અને ચર્ચા કરી ઋષિ મેઘજી આદિ લૂંકાના ૨૮ યતિએ સાથે ખરતર ગચ્છની સામાચારી સર્વ શાસ્ત્રસંમત જાણી આદરતાં થકાં લૂંકા ઋષિ મેઘજીને પોથાને માંમલે (પુસ્તકોની બાબત) લૂંકાના ૩૫ શ્રાવકો સાથે ઝગડા કરવા નિમિત્તે તપાઓએ ઝગડાના બોલ (મેઘજીની ઇચ્છાનુકૂળ મદદ કરવા આદિ બાબત) કબૂલ કરતાં શ્રીખરતર સંઘનાયક સત્યવાદી શ્રીસારંગધર મુહુંતાએ નિષેધવાથી ઋષિ મેઘજી ૨૮ ઠાણા તપામાં ગયા, પછી ૧૬ શ્રાવકો સાથે ખરતર ગચ્છની સામાચારી સૂજા વહોરાએ આદરી । હવે તે સૂજા વહોરાના પુત્ર રાજસી, તેણે પણ ચર્ચા કરી

શ્રીજિનપ્રતિમા જુહારીને ખરતર ગચ્છની સામાચારી ભાવે આદરી ખરતર થયા, ત્યારપછી મુલતાનમાંહી કોઈ કારણવશ ખરતર શ્રાવકો સાથે મનનો મેલાપ ન રહેવાથી અને તપાશ્રાવકો તરફના આદરથી કોઇ પણ વાતની ચર્ચા કર્યા વગર તેણે મુલતાનમા તપાની સામાચારી આદરી પછી એટલા (જે આગળ લખાય છે, તે) બોલ લખીને લાહોરના તપા શ્રાવકો ઉપર ખરતરોને પૂછવા માટે મોકલ્યા, પણ તે બોલ લાહોરના તપા શ્રાવકોએ કોઇએ ચર્ચ્યા નહી તેમ કોઇનેય પૂછ્યા પણ નહી, એમના એમ લખ્યા પડ્યા રહ્યા પછી તે બોલ આપણા હાથે આવ્યા, પરંતુ તે બોલ લખતા દ્વેષના કારણે એવા અસબદ્ધ રીતે લખ્યા છે કે જે લખાય નહી છતા હમણા યુગપ્રધાન આચાર્ય શ્રીજિનચંદ્ર સૂરિજીના આદેશથી અને આચાર્ય શ્રીજિનસિંહ સૂરિજીના કહેવાથી મ્હારા પોતાના નિમિત્તે ઉત્તર સહિત તે પ્રશ્નોના બોલ લખીએ છીએ।

(તપા ખરતર ભેદ ગ્રંથ ૧–૨, બોલ પહેલો)

१ प्रश्न–तपा दिन दिन प्रति पोसह व्रत करइ, खरतर सदा पोसह न करइ, पर्वतिथिइजि करइ ते स्युं ?।

ભાષા–તપા પ્રતિદિન–દરરોજ પોસહ કરે, ખરતર સદા પોસહ ન કરે, પર્વતિથિએજ કરે, તે શું ?

तत्रार्थे—श्रीसिद्धांतमांहि पोसहोववास नामइ इग्यारमा व्रत श्रावकना कह्याछइ ते पोषधोपवास आठमि चवदिसि पूनमि अमावसि इंए पर्वतिथिये करिवा कह्या, यदुक्तं श्रीसूयगडांगे (आगमो० स प्र पत्र ४०८) - "सेण चाउद्दसऽट्ठमुद्दिट्ठपुण्णमासिणीसु

पडिपुण्णं पोसहं सम्मं अणुपालेमाणे विहरति" तथा 'उववाइ' उपांगमांहि श्रावक वर्णनाधिकारि तथा श्रीठाणांगमांहि च्यार विसामानइ अधिकारी विधिवादइ तथा श्रीआवश्यक बृहद्वृत्तिमांहि तथा श्रावकप्रज्ञप्तिवृत्तिमांहि "पौषधोपवासातिथिसंविभागौ तु प्रतिनियतदिवसानुष्ठेयौ, न प्रतिदिवसाचरणीयौ" एहवे अक्षरे करी नियत नियत दिवसे पोसहव्रत लेवा श्रीहरिभद्रसूरिइं प्ररूप्या, अनइं प्रतिदिनइ पोसहव्रत लेवा निषेध्या छइ. कल्याणक तिथिना पोसह श्रीदशाश्रुत(स्कंध-पर्यूषणाकल्प) सिद्धांतमांहि "पाराभोयं पोसहोववासं पट्ठविसु" इति पाठेन, तथा "अट्ठाहियपज्जुसणे" इति गाथाये पजुसणना पोसह श्रीतत्त्वार्थवृत्तिइ तथा 'नवपद(प्रकरण) वृत्ति. मांहि कह्या, तथा 'सूयगडांगवृत्ति' मांहि श्रीशीलांकाचार्यइं "पूर्णमासिषु" इति वृत्तिइ १८ (मा) अध्ययने विधिवादइं कल्याणकना पोसह प्ररूप्या छइ।

उपधानना पोसह जे श्रावक श्राविका पासि निरंतर-पर्व पाखइं करावियइ छइ ते गीतार्थे आपांपणा सामाचारी ग्रंथांमांहि उपधान वहतां पोसह लिख्याछे, तेह भणी आचरणाना पोसह कहीयइ छइ, तद्यथा-"येन प्राग्नमस्कारादिसूत्राण्यधीतानि तेनापि यथायोगं निर्विलम्बमेवोपधानानि यथाशक्तितपसा पौषधग्रहणादिविधिनाऽवश्यं वहनीयानि" इति तपा (श्रीरत्न-शेखरसूरिकृत) श्रीआचारप्रदीपग्रंथे (१९ पत्रे)। एतावता आगमोक्त पोसह (व्रत) पर्वदिवसेजि करिवा, अपर्वदिवसे न करिवा। तथा ऋषिमतियां तपांगा गुरु श्रीदेवेन्द्रसूरिइं "अथ पौषधलक्षणं

तृतीयं शिक्षाव्रतमुच्यते–तत्र 'पोष' पुष्टिं प्रक्रमाद्धर्मस्य 'धत्ते' करोतीति पौषध अष्टमीचतुर्दशीपूर्णिमाअमावास्यादि पर्वदि वसानुष्ठेयो व्रतविशेष " इति धर्मरत्नप्रकरणवृत्तौ। तथा श्रावकदिनकृत्यसूत्रमाहि "छएह तिहीण मज्झम्मि, का तिही ? अज्ज वासरे । किं वा कल्लाणगं ? अज्ज, लोगनाहाण सतिअ ॥१॥ 'एहवइ पाठइं करि २ आठमी २ चवउमि १ पुनिम २ अमवासि, एव छ तिथि तथा कल्याणकतिथि सर्व एतली तिथि पोसह लेवानी कही–वृत्तिमाहिवखाणी छइ, तउ आगमोक्त एह पोसह लेवानी तिथि थकी अधिकी पोसह लेवानी तिथि मानइ छइ ते आगम तथा आचरणा थकी विरुद्ध जाणिवु, राग-द्वेषना वाह्या कहइ प्रमाण न थाइ, एतलइ आगमोक्त पोसह व्रत पर्व तिथैजि सदा लेवउ, पर पर्वतिथि पखइ न लेवउ, एव शास्त्रनी हुंडीना पाठ विशेषार्थीयइ पोसहछत्रीसीनी वृत्ति थकी जोइवा ॥ १ ॥

ભાષા -સિદ્ધાતમા ' પોસહોવવાસ ' નામનો જે અગ્યારમો વ્રત શ્રાવકનો કહ્યો છે તે પૌષધોપવાસ, આઠમ, ચૌદસ, પૂનમ અને અમાસ, આ પર્વતિથિએ કરવાનુ કહ્યુ છે, જેમ કે સૂયગડાગ સૂત્ર (આગમોદય સમિતિએ પ્રકાશિતના પાના ૪૦૮) મા લખ્યુ છે કે " તે લેપ નામનો શ્રાવક ચૌદસ આઠમ તથા ઉદ્દિષ્ટા તિથિ એટલે અમાસ અને તીર્થંકરદેવોની કલ્યાણકતિથિઓ, તથા પૂનમ આ બધી

પર્વતિથિઓએ સંપૂર્ણ એટલે આહારનો ત્યાગ દેશથી કે × સર્વથી

× જે વ્રતરૂપ પૌષધમાં ચાર પ્રકારના આહાર પૈકી એક દેશરૂપ માત્ર પાણીનો આહાર વાપરવાનું છૂટું હોય તેવો ત્રેવિહાર ઉપવાસ જે કરાય તે દેશથી આહાર પૌષધ અને જેમાં ચારે પ્રકારના આહારનો ત્યાગ રૂપ ચોવિહાર ઉપવાસ હોય તે સર્વથી આહાર પૌષધ કહેવાય.

આથી વિપક્ષિઓ જે આજે એકાસણાથીય વ્રતરૂપ પૌષધ કરવાનું માને છે, ને તે પ્રમાણે ચોસઠ પહોરીયા પોસા એકાસણા આદિથી કરાવે છે તે શાસ્ત્રાનુસાર નહીં, પણ સ્વમતિકલ્પનાએ ઘડી કાઢેલ ઘરના આચાર છે. અને પંડિત વીરવિજયજીએ પૌષધ વ્રતની પૂજામાં જે "એકાસણ કહ્યું રે શ્રીસિદ્ધાંતમાં" એમ લખ્યું છે, તે શાસ્ત્રકારોના અભિપ્રાયની અજાણતાએ તેમ સ્વગચ્છાચારના આગ્રહવશ લખ્યું છે, શાસ્ત્રકારોએ જે દેશથી આહાર પૌષધમાં એકાસણાને લીધું છે. તે વ્રતરૂપ ચારે પ્રકારના સંપૂર્ણ પૌષધમાં નહીં, પણ માત્ર આહારના ત્યાગરૂપ દેશપૌષધમાં લીધું છે, અને તેમાંય એકાસણાને લીધું છે. એટલું જ નહીં કિંતુ બિઆસણાને તેમ એકાદિ વિગયત્યાગને પણ શાસ્ત્રકારોએ દેશથી આહારપૌષધ કહ્યું છે, જુઓ આ ગ્રંથકારે પ્રશ્નોત્તર બીજામાં આપેલ આવશ્યક બૃહદ્વૃત્તિ તથા તેના ટિપ્પણનો પાઠ.

જ્યારે શાસ્ત્રકારોએ બિઆસણો અને વિગયત્યાગ માત્રને પણ દેશથી આહાર પૌષધ કહેલ છે ત્યારે, જોકે રામપંથી આગમપ્રજ્ઞજી તથા તેમના પૂર્વ લેખકો તો 'તપા ખરતર ભેદ' પૃ૦ ૨ તથા ૯૬, અને ૧૨૫. બોલ ત્રીજા તથા ૧૧૪ માં, દિવસમાં ગમે તેટલી વાર જમીને પણ રાત્રે પૌષધ કરવાની સ્પષ્ટ હિમાયતી કરી રહ્યા છે.

८ અને સ્નાનાદિ વડે શરીરસત્કાર ૨, અબ્રહ્મચર્ય ૩ તથા સાંસારિક વ્યાપાર આ ત્રણનો સર્વથી, ત્યાગ કરવા રૂપ ચારે પ્રકારનો પૌષધ સારી રીતે પાલન કરતો વિચરે છે " તેમજ ઉવવાઈ ઉપાંગ સૂત્રમાં

રતા તેમનો ટટ્ટુ ચાલે તેમ લાગતો નથી, કારણ કે એકાંત મતાગ્રહની ગગાધતા શિવાય આ વાત (ગમે તેટલી વાર જમીને રાત્રે પૌષધ કરવાની) કોઇનેય ગળે ઉતરે તેમ નથી, પણ આજના -સાગરપથી આદિ તપાઓ, જે એકાસણાએ વ્રતરૂપ પૌષધ કરવાના પૂરા હિમયતીઓ છે, તેઓ બિયાસણાએ અને નિગયત્યાગ માત્ર કરી વ્રતરૂપ પૌષધ કરવાનું કેમ નથી માનતા ? તેમ પૂજાની ઢાળમાં દેશથી આહારપૌષધ એકાસણા સુધીજ કેમ કહ્યું ? બિયાસણો અને નિગયત્યાગ કરીને પણ દેશથી આહારપૌષધ થઇ શકે એમ કહેવામાં શું વાંધો આવતો હતો ?

વસ્તુત શાસ્ત્રકારોના અભિપ્રાયે અગ્યારમા વ્રતરૂપ પૌષધમાં નહી, પણ માત્ર આહારના ત્યાગરૂપ દેશથી આહારપૌષધમાં એકાસણું બિયાસણું, ને નિગય ત્યાગ સુધા લેવાના છે જો એમ ન ન હોય તો શાસ્ત્રકારોએ તો ચારે પ્રકારના પૌષધોમાં દેશથી ને સર્વથી એના બે ભેદો ગણ્યા છે છતા પૌષધ દંડકમાં માત્ર આહારપૌષધ માટેજ 'देसओ सव्वओ वा' અને બાકીના ત્રણે પૌષધ માટે એકજ 'सव्वओ' શબ્દ કેમ બોલાય છે ? એનું કારણ એ કે—અમુક અંશે શરીર સત્કાર, અબ્રહ્મચર્ય અને ઘર વ્યાપારના ત્યાગને શાસ્ત્રકારોના અભિપ્રાયે દેશથી તે તે પૌષધ કહી

શ્રાવકના ગુણવર્ણન પ્રસંગે તેમ ઠાણાંગ સૂત્રમાં ૪ વિસામાના અધિકારે તથા હારિભદ્રીય આવશ્યકવૃત્તિમાં, તેમ શ્રાવકપ્રજ્ઞપ્તિવૃત્તિમાં વિધિવાદથી કહ્યું છે કે—" પૌષધોપવાસ અને અતિથિસંવિભાગ, આ બન્ને વ્રતો પ્રતિનિયત (અષ્ટમ્યાદિ પર્વ) દિવસોએ અનુષ્ઠેય—કરવાનાં છે, પરંતુ પ્રતિદિવસ—નિત્ય આચરવા યોગ્ય નથી." * આવા અનેક શાસ્ત્ર પાઠોથી શ્રીહરિભદ્રસૂરિ જેવા મહાપુરૂષોએ

શકાવા છતાં જેમ વ્રતરૂપ પૌષધમાં આહાર શિવાય બાકીના ત્રણે પૌષધો સર્વથીજ કરાય છે તેમ આહાર પૌષધ દેશથી ત્રેવિહાર ઉપવાસે અને સર્વથી ચોવિહાર ઉપવાસેજ થવું યુક્તિયુક્ત કહેવાય, અન્યથા એનું નામ 'પૌષધોપવાસ' એ કોઇ પણ રીતે સાર્થક ન બની શકે, એટલે અગ્યારમા વ્રતરૂપ પૌષધમાં જમવું કે ગમે તેટલી વાર જમીને રાત્રે પૌષધ કરવું એ શાસ્ત્રોક્ત નહીં. પણ તપાઓની ગચ્છ રૂઢી—શાસ્ત્ર નિરપેક્ષ સ્વમતિ કલ્પનાએ ઘડી કાઢેલ ઘરનો આચાર છે. રાગ દ્વેષના પ્રબલોદયે તેમ મતાગ્રહના તીવ્ર અભિનિવેશથી તપા ધર્મકીર્ત્તિ તથા રત્નશેખરસૂરિ આદિ, અને મોટે ભાગે અનુમાનતઃ સાગરનાજ પૂર્વભવીય ધર્મસાગરે શાસ્ત્રોકત સુવિહિત સામાચારીઓમાં ઘણો ફેરફાર કરી નાખ્યો છે.

* રત્નશેખર સૂરિએ વંદિત્તુ સૂત્રની ટીકા અર્થદીપિકામાં પર્વશિવાયની દરેક તિથિએ પૌષધની સિદ્ધિ કરી બતાવવાને શ્રાવકની પાંચમી પડિમાને લગતો આવશ્યક વૃત્ત્યાદિના નામે " **दिवैव ब्रह्मचारी, न तु रात्रौ** " આવો તદ્દન નવોજ કલ્પિત પાઠ ઘડી કાઢતાં ભવભિરૂતાને તો સર્વથા આભરાઇએજ મૂકી દીધી છે, આ કલ્પિત પાઠનો અર્થ થાય છે કે—' પાંચમી પડિમાધારી શ્રાવકે દિવસેજ

અષ્ટમ્યાદિ પર્વદિવસે પોસહ લેવા પ્રરૂપ્યા છે, ને તે શિવાય પ્રતિદિન-દરરોજ લેવા નિષેધ્યા છે ક્યાણક નિયિઓના પૌષધ પર્યુષણા-કલ્પસૂત્ર મૂળના " पाराभोयं पोमहोववाम पट्ठविंसु " આ પાઠથી અને " श्रट्ठाहियपज्जुमणे " આ ગાથાયે તત્ત્વાર્થવૃત્તિ તથા નવપદ-

---

બ્રહ્મચારી રહેવુ પણ રાત્રે ન રહેવુ ' આવો કલ્પિત પાઠ તૈયાર કરી બતાવનામા રત્નશેખરસૂરિનો આશય આવશ્યકવૃત્ત્યાદિ પ્રમાણિક સર્વમાન્ય ગ્રંથોમાં પૌષધના અંગે હરિભદ્રસૂરિ જેવા સમર્થ મહાપુરૂષોએ લખેલ" पौपधोपवासातिथिमविभागौ तु प्रतिनियतदिवसानुष्ठेयौ, न प्रतिदिवमा(नुष्टेयौ)चरणीयौ " આ પાઠની સમાનતા બતાવવાનો છે પરંતુ સુજ્ઞ વાચકોએ ધ્યાનમા રાખવુ કે આવશ્યકવૃત્તિ કે બીજા કોઇ પણ પ્રમાણિક સર્વમાન્ય ગ્રંથમા " दिवैव ब्रह्मचारी, न तु रात्रौ " એવા પાઠનો નામ નિશાણ સરખુએ નથી, ત્યાં (આવશ્યકવૃત્તિ પાના ૬૪૭ મા) તો પાઠ છે- दिया वभयारी, रातीपरिमाणकडे अपोसहिए । पेमहिए रत्तिम्मि य, नियमेण वभयारी य ॥ १ ॥ '

अर्थात्-' પાચમી પડિમાને વહન કરનાર શ્રાવક પૌષધ રહિત હોય ત્યારે દિવસે બ્રહ્મચારી, ને રાત્રે સ્ત્રીયોનો કે તેના ભોગોનો પ્રમાણ કરી રહેવુ, અને પૌષધ સહિત હોય ત્યારે રાત્રે પણ બ્રહ્મચારી રહેવુ ' આથી પાઠકોની જાણમાં આવી ગયુ હશે કે-ઉપર લખેલ આવસ્યકવૃત્તિના વાસ્તવિક પાઠની અંદર રત્નશેખરસૂરિના કથા મુજબ પાચમી પડિમાધારી શ્રાવકે રાત્રિએ બ્રહ્મચર્ય ન પાળવુ એવા અર્થનુ સૂચન સરખુએ નથી અને આ ઉપરોક્ત વાસ્તવિક પાઠનો સમર્થન 'સેનપ્રશ્ન' કે જે જૈનેતરોને મને જેમ ગીતા તેમ આગમપ્રજ્ઞ આદિ બધાએ તપાઓને મન પરમપૂજ્ય,

પ્રકરણવૃત્તિમાં (પર્યુષણ + તિથિના પોસહ) કહ્યા છે, તેમ સૂયગડાંગ ટીકા ૧૮ મા અધ્યયનમાં "पूर्णमासीपु" આ પાઠથી શ્રીશીલાંકાચાર્યે (પૂર્ણિમાના, આ રીતે) કલ્યાણક (આદિ તિથિઓના) પોસહ વિધિવાદથી કહ્યા છે.

ને પ્રમાણભૂત ગ્રંથ છે, તેમાં આચાર્ય વિજયસેન સૂરિજી પણ કરે છે, જુઓ-"श्राद्धप्रतिक्रमणसूत्रस्य वृ(त्तौ)त्यादौ तथा (?) आवश्यक वृत्त्यादौ च (?) श्राद्धपञ्चमप्रतिमाधिकारे 'दिवैव ब्रह्मचारी,न तु रात्रा'वित्युक्ततया लिखितमस्ति, परमावश्यकवृत्त्यादौ तद्विलोक्यमानं नोपलभ्यते तत्कथमिति प्रश्नोऽत्रोत्तरं-"दिया वम्भयारी राइंपरिमाणकडे" इत्यक्षराणि आवश्यकवृत्तौ सन्तीति ॥ ६२ ॥" (સેન પ્રશ્ન પત્ર ૯) આ પાઠમાં આચાર્ય વિજયસેનસૂરિ આવશ્યકવૃત્તિમાં "दिया वम्भयारी राइंपरिमाणकडे" એજ પાઠ હોવાનું સ્પષ્ટ કથે છે, આટલા વિચાર વિનિમયથી ફલિતાર્થ એ થયું કે રત્નશેખર સૂરિએ યેન કેન (ગમે તેમ કરીને) અપર્વ પૌષધની સ્વમાન્યતાને અંધશ્રદ્ધાળુ ભદ્ર જનતા સમક્ષ શાસ્ત્રસંમત સિદ્ધ કરવાનેજ "दिवैव ब्रह्मचारी, न तु रात्रौ" આ કલ્પિત નવો પાઠ આવશ્યકવૃત્તિના નામે ઘડી કાઢેલ છે.

+ તપા ખ૦ ભેદ પૃ૦ ૫૦ તથા ૧૪૪ માં લખેલ બોલ નં. ૫૭ અને ૫૯ નો ઉત્તર આ ગ્રંથકારે પ્રશ્નોત્તર ૫૬ માં યદ્યપિ સ્વતંત્ર આપેલ છે. છતાં પ્રસંગવશ આ શાસ્ત્રપ્રમાણોથી તે આશયનેજ સ્પષ્ટ કરતાં એ બતાવવામાં આવે છે કે ખરતરગચ્છવાળાઓ કલ્યાણક અને પજુસણની તિથિએ પણ પૌષધ તપાઓની માફક મતિ કલ્પનાએ નહીં, પણ શાસ્ત્રસંમતજ કરે છે.

ઉપધાનના પોસહ શ્રાદ્ધ શ્રાવિકાઓ પાસે નિત્ય પર્વ વગર જે કરાવીએ છીએ તે (બધાએ ગચ્છોના) ગીતાર્થોએ પોતપોતાના સામાચારી ગ્રંથોમા × ઉપધાનના પોસહ લખ્યા છે, એટલે (તે) આચરણાના પોસહ કહેવાય, તપા રત્નશેખરસૂરિકૃત આચારપ્રદીપમા કહ્યુ છે કે-"જેણે નવકારમંત્ર આદિ સૂત્રો ભણી લીધા હોય તેણે પણ સંયોગ મળ્યે કોઈ જાતનો વિલંબ કર્યા (ટાઇમ ગમાવ્યા) વગર યથાશક્તિ તપસ્યા પૂર્વક પૌષધાદિ વિધિએ ઉપધાન અવશ્ય વહન કરવા" એતાવતા આગમમા વર્ણવેલ (વ્રતરૂપ) પોસહ પર્વદિવસેજ કરવા, પણ અપર્વદિવસે ન કરવા, ઋષિમતિ તપાના ગુરૂ દેવેન્દ્રસૂરિ ધર્મરત્ન પ્રકરણની ટીકામા લખે છે કે-'હવે પૌષધરૂપ ત્રીજુ શિક્ષાવ્રત કહેવાય છે, તેમા જે ધર્મની પુષ્ટિ કરે તે પૌષધ, એટલે અષ્ટમી ચતુર્દશી પૂનમ અમાસ આદિ પર્વદિવસે કરવા યોગ્ય વ્રતવિશેષ (ને પૌષધ કહે છે) એનીજ રીતે શ્રાવકદિનકૃત્યમા

× यद्यपि श्रीमहानिशीथादौ उपधाने सदा पौषधग्रहणं नोक्तं तथापि सर्वगच्छीयगीतार्थाचरणया उपधाने पौषधग्रहणं प्रमाणीकृतमस्तीति दृश्यते।" (યોગવિધિ પ્રકરણ પૂર્વાચાર્યકૃત)

"पौषधग्रहणक्रिया तु यद्यपि महानिशीथे साक्षान्नोक्ता तथापि यथा साधोर्योगेष्वतिशायिक्रियावत्त्वं सर्वप्रतीतं तथा श्राद्धानामप्युपधानेषु विलोक्यते।" (આચાર પ્રદીપ પત્ર ૧૯)

મતલબ બન્ને પાઠોનો આ છે કે-ઉપધાનમા સદા પૌષધ લેવુ યદ્યપિ મહાનિશીથમા સાક્ષાત્ કહ્યુ નથી, છતા સાધુઓને યોગોદ્વહનમા જેમ વિશિષ્ટ ક્રિયા હોય છે તેમ શ્રાવકોને પણ ઉપધાનમા હોવી જોઇએ, એટલે બધા ગચ્છના ગીતાર્થોની આચરણાએ ઉપધાનમા પૌષધ લેવાનુ પ્રમાણ કર્યું છે



લખેલ " छण्हं तिहीण० " આ ગાથાથી બે આઠમ બે ચૌદસ, ને એકેક પૂનમ. અમાસ, આ ૭ પર્વતિથિઓ તથા તીર્થંકર ભગવંતોની કલ્યાણક તિથિઓ. આ બધી તિથિઓ પોસહ વ્રત લેવાની કહી છે. વૃત્તિમાં પણ એજ વ્યાખ્યા કરી છે. એથી પોસહ વ્રત લેવાની એ આગમોક્ત તિથિઓ કરતાં અધિક તિથિઓ પોસહ લેવાની (જે) માને છે તે આગમ તથા આચરણાથી વિરૂદ્ધ જાણવો, રાગદ્વેષને વશ થયેલા કહે તે પ્રમાણ ન થાય, એટલે આગમોક્ત રીતિએ પોસહ વ્રત પર્વતિથિએજ લેવો. પર્વશિવાય ન લેવો, + આ બાબતમાં શાસ્ત્રના નામ પાઠ (વિગેરે) વિશેષ જાણવાની ઇચ્છાવાળાએ 'પૌપધષટ્ત્રિંશિકા' સટીક જોઇ લેવી (તેમ અનુવાદકના ગુરૂદેવ પંન્યાસપ્રવર શ્રીકેશર મુનિજી ગણિવર લિખિત હિંદી 'પ્રશ્નોત્તર વિચાર' જોવા ભલામણ છે.)

(તપા ખરતર ભેદ ગ્રંથ ૧–૨, બોલ ૨ જો)

२ प्रश्न–तथा खरतर आंबिल नीवी एकासणइ पोसह न करइ, ते स्युं ?

ભાષા—ખરતર આંબિલ નીવી. એકાસણાએ પોસહ ન કરે, તે શું ?

तत्रार्थे खरतरांने पुणि आचरणाना पोसह जे छइ तेहमांहि आंबिल नीवी एकासणा करइजि छइ, जइ पोसहमांहि जिमिवउ न हवइ तओ किम जीमाइ ?, तथा शास्त्रे देशत

+ અરે અપર્વદિવસે પૌષધના હિમાયતિઓ ! ખરતર ગચ્છવાળાઓ તો અપર્વના પૌષધનો નિષેધ કરે છે. છતાં, છે તે ઉપર બતાવ્યા પ્રમાણે શાસ્ત્રાનુસાર, પરંતુ તમો પોતાના પગતળે બળતીને કાંઈ જુઓ છો ? લૌકિક પંચાંગ કે જેના આધારે આજે આખો જૈન સમાજ તિથિ આદિનો વ્યવહાર માની રહ્યો છે. તેમાં તે જ્યોતિપના

आहार पोसहमाहि व्यासणा पुणि कह्या छइ तद्यथा-" आहार पोसहो दुविहो-देसे य सव्वे य, देसे अमुगा विगती आय विल वा एकसिं वा दो वा " इत्यादि श्रीआवश्यक बृहद्वृत्तौ (पत्र८३६)।'एकभक्त द्विभक्त वा करोती'ति टिप्पनके × (पत्र११६) पर तपानइ व्यासणाना पोसहनी आचरणा नथी, एव खरतरानइ

ગણિતાનુસાર થતી તિથિની વૃદ્ધિ પ્રસગે સૂર્યોદયથી સપૂર્ણ અહોરાત્રિના ભોગવટાવાળી આઠ ઘડીની આઠમ કે ચૌદસ પર્વતિથિને સમપથિઓ ફલ્ગુ કહીને તેમ સાગરપથિઓ પોતાની કપોલ કલ્પનાએ સાતમ કે તેરસ બનાવીને સપૂર્ણ અહોરાત્રિ ૬૦ ઘડીની આઠમ કે ચૌદસ પર્વતિથિએ પણ પૌષધાદિ ધર્મકાર્યોનો નિષેધ છડેચોક કરી રહ્યા છો એટલુ જ નહીં પણ તે તે પહેલી પર્વતિથિઓને ફલ્ગુ કે અપર્વતિથિ માનીને કહીને અર્થાપત્તીએ ગૃહસ્થોને વનસ્પતિના છેદન ભેદનનો તેમ અબ્રહ્મ સેવનનો ઉપદેશ દઇ રહ્યા છો આ તે કઇ જાતનો તમારો ધર્મોપદેશ ?

જો કહો કે પર્વતિથિઓ મહિનાની બારજ શાસ્ત્રકારોએ કહી છે તે તેર કેમ કરાય ? તો તમને પ્રશ્ન કરવાનુ કે અપર્વ તિથિઓ ૧૮ ને બદલે ૧૯ કરવાનુ ફરમાન ક્યા જૈન શાસ્ત્રકારોએ તમને આપ્યુ છે ? લીલવણીના છેદન ભેદન અને અબ્રહ્મસેવન માટે અપર્વ તિથિની વૃદ્ધિ થાય તો ભલે થાય પરતુ તે સાવદ્યવ્યાપારના ત્યાગરૂપ ધર્મ-સાધન માટે એક તિથિની વૃદ્ધિ ન થવા દેવી આવુ કથન ક્યા જૈન સિદ્ધાતનુ છે ? મહાશયજી ! પહેલા પોતાનુ ઘર તપાસી પછી બીજાને કઈ પણ કહેવુ ઉચિત કહેવાય

× આ બે પાઠોના વિવેચન માટે પ્રશ્નો૦ ૧ ની પહેલી ફુટનોટ જુઓ

पणि जियइ तीयइ पोसहमांहि जिमता नथी. पोसहविशेषइं जिमिवउ सद्दहीयइ छइ, श्रीजिनवल्लभ सूरिजीयइ पुणि त्रिहुं पोसहनइ (?) साधारणइ पोसहमांहि जिमिवानी विधि कही छइ, पुणि आगमोक्त पोसहनउ नाम नथी कह्यउ ।

ભાષા:-ખરતરોને પણ (ઉપધાન આદિ) આચરણાના જે પોસહ છે, તેમાં આંબિલ. નીવી. એકાસણા કરેજ છે, યદિ પોસહમાં જમવાનું ન હોય તો કેમ જમાય? અને શાસ્ત્રોમાં દેશત આહાર પોસહમાં બિયાસણું પણ કહ્યું છે, તે આવી રીતે-" આહાર પોસહ બે પ્રકારનો-દેશથી અને સર્વથી, દેશથી અમુક વિગય અથવા આંબિલનો આહાર એકવાર યા બે વાર (ખાય)" ઇત્યાદિ આવશ્યક બૃહદ્વૃત્તિમાં, તથા 'એક ભક્ત (એકાસણું) અથવા બે ભક્ત (બિયાસણું) કરે" આ રીતે આવશ્યક ટિપ્પનમાં કહેલ છતાં તપાને બીયાસણાના પોસહની આચરણા (જેમ) નથી, તેમ ખરતરોને જે તે પોસહમાં નથી જમતા પણ પોસહવિશેષ(ઉપધાનાદિ)માં [જમવું માનીએ છીએ. શ્રીજિનવલ્લભસૂરિજીએ + પણ બન્ને પોસહને (?) સાધારણ પોસહમાં જમવાની વિધિ કહી છે પણ આગમોક્ત (અગ્યારમા વ્રતરૂપ) પોસહનું નામ નથી કહ્યું.

+ તપા ખ. ભેદ પૃ. ૨ માં જંબ્વાચાર્ય લખે છે કે-" શ્રીજિનવલ્લભસૂરિ (કૃત) 'પૌષધ વિધિ પ્રકરણમાં ઉપધાન વિના પોસહમાં જમવું કહ્યું (છે), ઉપધાનનું કાંઇ કહ્યું નથી" આના ઉત્તરમાં જણાવાનું કે જો ઉપધાન વિના પોસહમાં જમવાનું કહ્યું છે તો તેનો તે પાઠ કેમ ન મૂકયો ? અને 'ઉપધાનનું કાંઇ કહ્યું નથી, છતાં દરેક પોસહમાં

(તપા ખરતર ભેદ અંક ૧-૨, બોલ ૩ જો)

३ प्रश्न-तथा खरतर गच्छि श्रावक श्राविका बि पहर पछीइ जिमीने पर्वदिनइ रातिनउ पोसह न करइ, ते स्युं?।

જમવાનું માની લેવામાં સ્વમતાગ્રહ સિવાય બીજું કોઈ કારણ ન હોઈ શકે. વળી એજ પૃ૦ ૨ માં જિનવલ્લભ સૂરિના નામ પર ટિપ્પણ લખતા જખ્વાચાર્ય 'સેનપ્રશ્ન'ના તે પ્રશ્નોત્તરને 'ઘણો સૂચક' માની કહીને ઉદ્ધૃત કરે છે કે જેની અંદર "પિંડવિશુદ્ધિના કર્તા જિનવલ્લભ ગણિનું ખરતર ગચ્છીયપણું સંભવતું નથી" એવો ફરમાન આચાર્ય વિજયસેનસૂરિ જાહેર કરે છે એ બાબતમાં તેમણે લગાવેલ બે હેતુઓ પૈકી પહેલો હેતુ આ છે કે-" તેમણે (જિનવલ્લભ ગણિએ) કરેલ 'પૌષધવિધિ પ્રકરણ'માં 'ઉપવાસ કરવાની શક્તિના અભાવે શ્રાવકોને [પૌષધમાં] જમવા-એકાસણું વિગેરે કરવાનું કહેલ છે" આ ઉપરના અવતરણમાં ભાષાંતરકારનું જે લખવું કે "ઉપવાસ કરવાની શક્તિના અભાવે" એ કેવળ પોતાની મતિ કલ્પના છે 'સેનપ્રશ્ન' મૂળમાં એવી વાતજ નથી ત્યાં તો પાઠ છે "तत्कृते पौषधविधिप्रकरणे श्राद्धानां पौषधमध्ये जेमनाक्षरदर्शनात्" અર્થાત્ "તેમણે કરેલ 'પૌષધવિધિ પ્રકરણ'માં શ્રાવકોને પૌષધમાં જમવાનું કહેલ છે"

આથી સમજવાનું કે એક તો 'સેન પ્રશ્ન' મૂળમાં "ઉપવાસ કરવાની શક્તિના અભાવે' એમ આચાર્ય વિજયસેનસૂરિ લખતા નથી ત્યાં ભાષાંતરકારે પોતાની કપોલકલ્પિત માન્યતાને પુષ્ટ કરવા ખાવે

ભાષા—ખરતર ગચ્છમાં શ્રાવક શ્રાવિકાઓ બે પહર પછી જમીને પર્વદિને રાતનું પોસહ ન કરે, તે શું ?

તેમ મતધડંત ભાષાંતર કરેલ છે અને આગમપ્રજ્ઞ જંબ્વાચાર્ય પણ સ્વમાન્યતાની સિદ્ધિ બતાવવા 'સેનપ્રશ્ન' મૂળને જોયા—તપાસ્યા વગર આંખો મીચીને માત્ર ભાષાંતરનો અવતરણ લખીને ખુશ થઇ ગયા. પરંતુ આચાર્ય વિજયસેનસૂરિનું કથન "ઉપવાસ કરવાની શક્તિના અભાવે પૌષધમાં જમવાનું 'પૌષધવિધિ પ્રકરણ' માં કહ્યું છે" એવું જરાએ નથી. તેમનું કથન તો એટલુંજ કે "પૌષધ વિધિ પ્રકરણમાં શ્રાવકોને જમવાનું લખ્યું છે." હવે 'પૌષધવિધિ પ્રકરણ' માં એ બાબત કેમ છે? તે તપાસીએ, ત્યાં તો "जइ पारणइत्तो" એવું ચોક્ખું પાઠ છે, એનો મતલબ છે કે "જો પારણાવાલો હોય તો પચ્ચક્ખાણ પારે ને ભોજન કરે" આવોજ પાઠ પૌષધમાં જમવા બાબતનો તમારા તપાઓને માન્ય આચારવિધિ નામનું સામાચારી પ્રકરણ કે જે સુરતના ઝવેરી મંછુભાઈ જીવણચંદ તરફથી સાગરાનંદે પ્રકાશિત કરાવેલ છે, તેના પાના ૧૨ માં તેમ સુબોધા સામાચારી, કે જે દે૦ લાલ ભાઇ પુ૦ ફંડ તરફથી પ્રકાશિત થયેલ છે, તેના પણ પત્ર ૩૬ માં છે જુઓ "जइ पारणइत्तो तो पच्चक्खाणे पुण्णे खमासमणपुव्वं पुत्ति पेहिय०" ઇત્યાદિ, આ બધા પાઠોમાં પારણાવાલાને પૌષધમાં ભોજન કરવાનું વિધાન છે. હવે વિચારવાનું એ છે કે પારણાવાલો કોણ કહેવાય ? શું રોજના રોજ ગમે તેટલી વાર જમતો હોય, ને પૌષધના દિવસે જે આંબિલ કે એકાસણું કરે તેને પારણાવાલો કહેવાય ? ના ના, આગમપ્રજ્ઞજી મહારાજ ! તેને પારણાવાલો કદાપિ ન કહી